Reg. No. MAHHIN / 2008 / 26222 ISSN-2250-2335

समीचीन

(साहित्य-समाज-संस्कृति और राजनीति के खुले मंच की अर्द्ध वार्षिक-अव्यावसायिक पत्रिका)

पीयर रिव्यूड व यू. जी. सी. केयर लिस्ट में सम्मिलित जर्नल

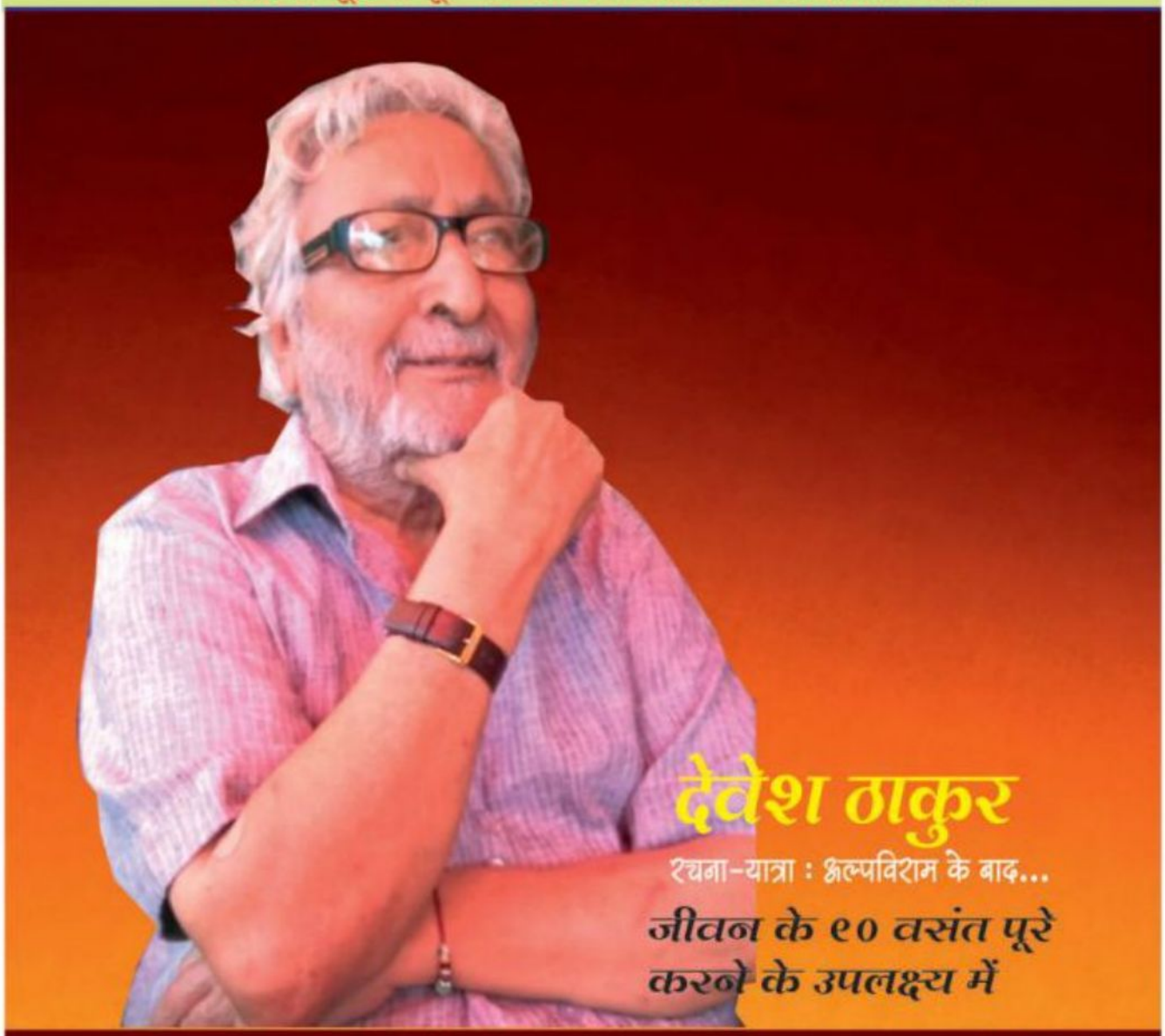

देवेश ठाकुर

रचना-यात्रा : अल्पविराम के बाद...

जीवन के ९० वसंत पूरे करने के उपलक्ष्य में

• वर्ष-16 • अंक 36 • जुलाई - सितंबर 2023 • पूर्णांक 74 • मूल्य 100 रुपए 36

• संपादक - डॉ. सतीश पांडेय

ISSN-2250-2335 Reg. No. MAHHIN/2008/26222

समीचीन

(साहित्य-समाज-संस्कृति और राजनीति के खुले मंच की त्रैमासिक-अव्यावसायिक पत्रिका)

पीयर रिव्यूड व यू. जी. सी. केयर लिस्ट में सम्मिलित जर्नल

प्रबंध संपादिका :
डॉ. रोहिणी शिवबालन
संस्थापक :
डॉ. देवेश ठाकुर
संपादक :
डॉ. सतीश पांडेय
संयुक्त संपादक :
डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट
संपादकीय सहयोग :
डॉ. अनंत द्विवेदी
डॉ. ज्योत्सना राम

संपादकीय-संपर्क :
बी-23, हिमालय सोसाइटी,
असल्फा, घाटकोपर (प.),
मुंबई-400 084.
Email: sameecheen@gmail.com
website-www.http//:
sameecheen.com

विशेष :
'समीचीन' में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार संबद्ध रचनाकारों के हैं। संपादक-प्रकाशक की उनसे सहमति आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का न्याय-क्षेत्र मात्र मुंबई होगा। सभी पदाधिकारी पूर्णरूप से अवैतनिक।

परीक्षक विद्वत मंडल : (Peer Review Team)
1) डॉ. राम प्रसाद भट्ट
भारत-विद्या विभाग,
हैम्बर्ग विश्वविद्यालय, हैम्बर्ग, जर्मनी
2) प्रो. (डॉ.) देवेन्द्र चौबे
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
3) प्रो. (डॉ.) वशिष्ठ अनूप
हिन्दी विभाग, काशी हिंदू विवि.,
वाराणसी, (उ. प्र.)
4) डॉ. नरेन्द्र मिश्र
प्रो. हिंदी, मानविकी विद्यापीठ, इग्नू मैदानगढ़ी,
दिल्ली110068
5) प्रो. (डॉ.) करुणाशंकर उपाध्याय
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, मुंबई विश्वविद्यालय,
मुंबई
6) प्रो. (डॉ.)अनिल सिंह
अध्यक्ष, हिन्दी अध्ययन मंडल, मुंबई
विश्वविद्यालय, मुंबई
7) प्रो. (डॉ.) सदानंद भोसले
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, सवित्रीबाई फुले पुणे
विद्यापीठ, पुणे
8) प्रो. (डॉ.) शरेशचंद्र चुलकीमठ
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, कर्नाटक
विश्वविद्यालय, धारवाड़
9) डॉ. अरुणा दुबलिश
पूर्व प्राचार्य, कनोहरलाल महिला स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, मेरठ (उ. प्र.)

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक : डॉ. सतीश पांडेय ने प्रिंटोग्राफी सिस्टम (इंडिया) प्रा. लि., 13/डी, कुर्ला इंडस्ट्रियल एस्टेट, नारी सेवा सदन रोड, नारायण नगर, घाटकोपर (प.) मुंबई-400 086 में छपवाकर बी-23, हिमालय सोसाइटी, असल्फा, घाटकोपर (प.), मुंबई-400084 से प्रकाशित किया।

• वर्ष-16 • अंक 36 • जुलाई-सितंबर-2023 • पूर्णांक 72 • मूल्य 100 रुपए
सहयोग : एक प्रति रु. 100/-, वार्षिक रु. 400/-, पंच वार्षिक रु. 2000/-

सीधे समीचीन के खाते में भेजने के लिए : खातेधारक का नाम : **समीचीन / sameecheen**
A/C No. 60330431138, Bank of Maharashtra,
Dr. Ambedkar Road, Dadar, Mumbai. IFSC : MAHB0000045

अनुक्रमणिका

1. अपने तईं- अल्पविराम के बाद 07-08
2. डॉ. देवेश ठाकुर / जीवन वृत्त 09-14
3. पुरानी यादों के साथ-साथ कुछ नए लम्हे - डॉ. आभा नागराल 15-18
4. पिता के साथ बिताए कुछ पल - डॉ. आरती प्रसाद 19-21
5. जीवन-संध्या में भी प्रकाशवान - डॉ. रोहिणी शिवबालन 22-25
6. डॉ. देवेश ठाकुर : एक सतत ऊर्जस्वी व्यक्तित्व - विजय कुमार 26-30
7. सजग रचनाकार ही नहीं बेहतर इंसान भी - डॉ. आशा नैथानी दायमा 31-33
8. प्रकाश बिंदु से प्रकाश पुंज की सार्थक पहल - 'जंगल के जुगनू - डॉ. सचिन गपाट 34-39
9. 'जंगल के जुगनू' : स्त्री का एकाकी संघर्ष - डॉ. जाकिर हुसैन गुलगुन्दी 40-44
10. संघर्षरत स्त्री का समाजबोध : जंगल के जुगनू - डॉ. प्रीति सोनी 45-49
11. 'जंगल में जुगनू' में जीवन की सार्थकता - डॉ. उमेश कुमार 50-53
12. 'जंगल के जुगनू' और 'कातरबेला' उपन्यास में स्त्री मुक्ति का संघर्ष - सूर्जलेखा ब्रह्म 54-58
13. निम्नवर्गीय बालक की संघर्ष कथा : 'जीवा' - डॉ. इंदु बाली 59-67
14. जीवा' में व्यक्त समकालीन सामाजिक यथार्थ - डॉ. ममता पंत 68-74
15. अब भी बनाई जा सकती हैं जगहें रहने के लायक - वैशाली खेडकर 75-80
16. देवेश ठाकुर के उपन्यासों में यथार्थ चित्रण : विशेष सन्दर्भ 'कातर बेला' - डॉ. नीलाक्षी जोशी 81-87
17. कातर बेलाः स्त्री पुरुष-संबंधों का आख्यान - डॉ. दीपिका विजयवर्गीय 88-91
18. 'कातर बेला' उपन्यास में चित्रित पारिवारिक घुटन - डॉ. शर्लिन 92-96
19. 'कातर बेला': आधुनिक नारी के एकाकीपन की व्यथा-कथा - शारदा कहार (शोधार्थी)/ डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट (शोध निर्देशक) 97-100
20. जीवन-संध्या में जिजीविषा और संकल्प की अनूठी कथा : संध्याछाया - डॉ. वसुधा सहस्त्रबुद्धे 101-105
21. देवता का गुनाहः दैहिकता की कथा - कला जोशी 106-110
22. नकाबियों को बेनकाब करता : देवता के गुनाह - डॉ. श्यामसुंदर पांडेय 111-116
23. स्वप्न दंश : फिल्मी दुनिया का कड़वा सच - डॉ. दिनेश पाठक 117-121
24. 'व्यक्तिगत' में व्यक्त संवेदनाओं का स्वर - डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट 122-128
25. मारिया : अंर्तद्वन्द से ग्रस्त युवती की कहानी - डॉ. बसुंधरा उपाध्याय 129-139
26. 'मारिया' उपन्यास की मूल संवेदना - डॉ. शरेशचन्द्र चुलकीमठ 140-145

27. उच्च शिक्षा की जमीनी हकीकत - डॉ. महेश दवंगे 146-152
28. उच्च शिक्षा व्यवस्था की परतें खोलता उपन्यास-
'कैम्पस कथा'- डॉ. आरिफ शौकत महात 153-159
29. स्मृतियों के कोलाज में व्यक्त संवेदना - डॉ. रूपा चारी 160-163
30. बाजार का दबाव और चिकित्सा जगत का सच :
ऐसा भी होता है - डॉ. सतीश पांडेय 164-170
31. बहुस्तरीय लड़ाई का सच : तीसरी लड़ाई - श्यामसुंदर पांडेय 171-176
32. देवेश ठाकुर के साहित्य में वर्णित स्त्री विमर्श
- डॉ. डी. एस. भण्डारी 177-180
33. देवेश ठाकुर के परवर्ती उपन्यासों में विमर्श के विविध
आयाम -डॉ. राठोड बाळु भोपू 181-185
34. देवेश ठाकुर का उपन्यास साहित्य - डॉ. दिलीप मेहरा 186-194
35. देवेश ठाकुर के उपन्यासों में शिक्षा जगत की विसंगतियाँ
- डॉ. मोटवानी संतोष 195-198

कहानी-साहित्य का मूल्यांकन :

36. फैसला तथा अन्य कहानियों में मनोवैज्ञानिक संघर्ष
- डॉ. राम बिनोद रे 199-203
37. फैसला तथा अन्य कहानियाँः मानवीय संवेदनाओं के
विविध आयाम - रीना सिंह 204-209

आत्मकथा-जीवनी :

38. यों जिए देवेश (संदर्भ : देवेश ठाकुर की आत्मकथा
'मैं यों जिया') - डॉ. माधवी बागी 210-220
39. देवेश ठाकुर : एक संघर्ष-गाथा -प्रो. डॉ. मोहसिन
अली खान - डॉ. नरेंद्र विजय पाटील 221-234
40. बुद्ध-गाथा : डॉ. देवेश ठाकुर की कलम से
डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे 235-238

सामयिक :

41. आजादी की आधी सदी और आम आदमी की व्यथा कथा
- डॉ. अरुणा दुबलिश 239-244
42. आम आदमी के इतिहास का रचनात्मक दस्तावेज
- डॉ. सतीश पांडेय 245-247

शोध-समीक्षा :

43. हिन्दी समीक्षा के क्षेत्र में डॉ. देवेश ठाकुर का योगदान
- डॉ. प्रशांत देशपांडे 248-254
44. समीक्षा का स्वररूप और उत्तरदायित्व : देवेश ठाकुर के संदर्भ में :
डॉ. अनन्त द्विवेदी 255-265

45. समीक्षक डॉ. देवेश ठाकुर की दृष्टि में हिंदी कहानी
- डॉ. सत्यवती चौबे 266-270
46. आलोचक देवेश ठाकुर की दृष्टि में 'तीसरा सप्तक':
एक अवलोकन - डॉ कोयल विश्वास 271-277
47. साहित्य की सामाजिक भूमिका - डॉ. अर्चना रामजीत दुबे 278-282
48. साहित्य की सामाजिक भूमिका का सवाल और देवेश ठाकुर
- डॉ. भगवती प्रसाद उपाध्याय 283-289
49. मैला आँचल' की रचना प्रक्रिया पर देवेश ठाकुर
- डॉ. गीता संतोष यादव 290-293
50. मैला अँचल की रचना प्रक्रिया - वृषाली चौघुले 294-303

शोध :

51. साहित्य और मानवतावाद (सन्दर्भ : आधुनिक हिंदी साहित्य
की मानवतावादी भूमिकाएँ) - डॉ. तबस्सुम खान 304-309
52. साहित्येतिहास लेखन की एक नई दृष्टि और अंतरानुशासन
- डॉ. सतीश पांडेय 310-319

उच्च शिक्षा व्यवस्था की परतें खोलता उपन्यास- 'कैम्पस कथा'

- डॉ. आरिफ शौकत महात

मानव जीवन में शिक्षा का स्थान महत्वपूर्ण है। विशेषतः उच्च शिक्षा के लिए महाविद्यालय स्तर तक आते-आते विद्यार्थियों का शारीरिक विकासअपने चरम तक पहुँच जाता है। यही वह समय भी है, जब मनुष्य अपने भविष्य को सही दिशा की ओर बढ़ाता है। इसीलिए उसके बौद्धिक विकास में उच्च शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उच्च शिक्षा की ओर अनदेखा करना किसी भी समाज या राष्ट्र के लिए हितकारी नहीं होता। देवेश ठाकुर जी का उपन्यास 'कैम्पस कथा' वर्तमान उच्च शिक्षा-व्यवस्था की विसंगतियों पर करारा प्रहार करता है। आज की शिक्षा व्यवस्था और उसे संचालित करने वाले अध्यापक एवं महाविद्यालय-प्रशासन का यथार्थ रूप विवेच्य उपन्यास में चित्रित हुआ है। यद्यपि यह उपन्यास रामेश्वरम कॉलेज ऑफ आर्ट्स एंड साइंस के कैम्पस की कथा को उजागर करता है लेकिन इसका कलेवर इतना बड़ा है कि यह भारत देश के किसी भी क्षेत्र में कार्यरत कॉलेज की कथा कही जा सकती है।

इस उपन्यास की कथावस्तु रामेश्वरम कॉलेज एवं उसमें कार्यरत अध्यापकों एवं प्राचार्य के इर्द-गिर्द घूमती है। उपन्यास की शुरुआत गर्मी की छुट्टियों के बाद कॉलेज के खुलने और नए प्राचार्य की नियुक्ति के साथ होती है। इस उपन्यास में रामेश्वरम कॉलेज में घटने वाली हर घटना देश के किसी भी कॉलेज में घटने वाली घटना से विपरीत नहीं है। प्रस्तुत उपन्यास के माध्यम से उपन्यासकार ने वर्तमान शिक्षा व्यवस्था पर भाष्य करने के साथ देश में वर्तमान उच्च शिक्षा की स्थिति, अध्यापन करने वालों का स्तर और उनकी मानसिकता, शिक्षा व्यवस्था में पनपता भ्रष्टाचार आदि पर प्रकाश डाला है। अतः कह सकते हैं कि यह उपन्यास महाविद्यालयीन उच्च शिक्षा व्यवस्था की परतें खोल उसकी हर कोने से चिकित्सा करता है।

हमारे देश की संस्कृति में अध्यापन करने वाले गुरु का दर्जा ईश्वर के समान माना गया है। इस कार्य की अपनी गरिमा है। वर्तमान दौर में यह पूजनीय कार्य भी व्यवसाय बन चुका है। उपन्यास की पात्र महुआ के पिता उन्हें अध्यापक बनने के लिए इसलिए प्रोत्साहित करते हैं क्योंकि इस क्षेत्र की अपनी गरिमा है। समाज में इसका रुतबा है लेकिन इस क्षेत्र में आने के बाद महुआ को इस पावन क्षेत्र में पनपती व्यवस्था परेशान करती है। उनका यह स्पष्ट मत बन जाता है कि 'अब हर कोई टीचर बन जाता है। जिसे कहीं नौकरी नहीं मिलती वह टीचर बनने का जुगाड़ करने लगता है। आज बहुत कम ही टीचर हैं जो शिक्षा के आदर्श को लेकर इस क्षेत्र में आते हैं।' प्रस्तुत बानगी को ध्यान में रखते हुए आज की शिक्षा व्यवस्था में आयी गिरावट को, उसके बदलते स्वरूप को, भारतीय शिक्षा व्यवस्था की वास्तविकता एवं उसके भविष्य को 'कैंपस कथा' उपन्यास के माध्यम से समझने का प्रयास करते हैं।

रामेश्वरम कॉलेज ऑफ आर्ट्स एंड साइंस में नए प्रिंसिपल डॉ. राधा कृष्णन को इस लिए कॉलेज की कमान सौंपी जाती है कि वह अपने अनुभव के जोर पर कॉलेज का

अकादमिक स्तर बढ़ाकर कॉलेज में इस वर्ष आने वाली नैक कमेटी के माध्यम से दी जाने वाली ग्रेड में इजाफा करें। हर कॉलेज की अपनी कमजोरियाँ होती हैं। रामेश्वरम कॉलेज मुंबई का सबसे फिसड्डी कॉलेज है। यहाँ ज्यादातर गरीब तबके के लोग पढ़ते हैं। इनकी अपनी समस्याएँ हैं। किसी भी बीमार की चिकित्सा तभी संभव है जब उसकी बीमारी का पता चले। अतः बीमारी को समझने के लिए बीमार की हर कोने से जाँच करना जरूरी बन जाता है। तभी सही चिकित्सा करना संभव है। रामेश्वर कॉलेज की मूल समस्याओं को जाने बिना प्रिंसिपल डॉ. राधा कृष्णन ने सुनी सुनाई बातों पर और किसी गुट विशेष की सहायता से कॉलेज का कार्य करने की कोशिश की जिसके कारण वह मूल समस्याओं तक पहुँच नहीं पाए और अपने चरित्र की कमजोरियों के चलते वह दलदल में फँसते चले गए।

महाविद्यालय के हर कार्य एवं कार्यान्वित घटक के केंद्र में विद्यार्थी ही होता है लेकिन रामेश्वरम कॉलेज के केंद्र में विद्यार्थी नदारत हैं। यहाँ पढ़ाने के लिए अध्यापक पढ़ते नहीं हैं। जो नोट्स शुरू के साल में तैयार किया था, वहीं सालों साल चलाते हैं। असल में चिंता की बात यह है कि उन्हें इसका अफसोस नहीं हैं बल्कि इस कार्य को भी अपना हुनर मानते हैं। प्रो. फूलमती अरोड़ा और मिसेस आनंदी की बातचीत इसी ओर इशारा करती हैं-

'अरे पढ़ाने के लिए तुम पढ़ती हो क्या?'

-भई, कुछ, थोड़ा बहुत तो देखना ही होता है।'

-मैंने तो अपने पहले और दूसरे साल में ही नोट्स बना लिए थे। उन्हीं को क्लास में डिक्टेट कर देती हूँ। पाँच साल से कुछ ज्यादा ही हो गए हैं। वे ही चल रहे हैं।'

-हाँ, हिस्ट्री में चल जाता होगा। एकॉनामिक्स में नहीं चलता।

-चलाने वाला चाहिए, सब चल जाता है।'[1]

इस तरह से काम चलाने वाले अध्यापकों की भरमार देश के हर महाविद्यालय में मौजूद है। मिसेस रेड्डी इन्चार्ज प्राचार्य मिसेस पिल्लई जी से महाविद्यालय के स्पोर्ट्स सेक्शन में विद्यार्थियों को सहूलियत देने की बात करती हैं, स्पोर्ट्स के लिए बच्चों से जितनी फीस ली जाती है, उससे आधा भी खर्चा स्पोर्ट्स पर न करने की शिकायत करती हैं और यह बताने से भी नहीं चूकतीं कि हमारे बच्चे स्पोर्ट्स में अच्छे हैं, उन्हें सपोर्ट करें तो और अच्छा करेंगे। लेकिन उनकी इस बात को अनदेखा किया जाता है और स्पोर्ट्स का पूरा खर्चा किसी और कार्य में लगा दिया जाता है। उनके द्वारा जब यह बात कही जाती है कि हमारे ज्यादातर बच्चे झोपड़पट्टियों, चालों और ऐसी जगह से आते हैं, जहाँ पढ़ाई के प्रति उनमें जागृति लाना बड़ा कठिन काम है लेकिन वह लोग इंटरेस्ट ले रहे हैं तो हमें उनके लिए ऐसी जमीन तैयार करनी चाहिए ताकि उन्हें मौका मिल सके। मिसेस रेड्डी जैसे प्रामाणिक एवं विद्यार्थियों के हित को प्राथमिकता देने वालों की बातों को अनदेखा करना आज आम बनता जा रहा है। आज सभी महाविद्यालयों की यही स्थिति है। यहाँ पढ़ने और पढ़ाने कोई नहीं आता और जो पढ़ने और पढ़ाने आते हैं, उन्हें उनका काम करने नहीं दिया जाता। 'मैडम, पढ़ने-पढ़ाने कौन आता है इस कॉलेज में सब मस्ती करते हैं। स्टुडेंट्स भी और टीचर्स भी। तभी तो रिजल्ट ३०-३५ परसेंट से

ज्यादा नहीं आता। करीब २५ साल हो गए हैं कॉलेज को स्टार्ट हुए। अब देखो, सामने इजीचेयर पर प्रो. देशपांडे बैठे हैं पलथी मार कर। पिछले पंद्रह मिनटों से हथेली पर तम्बाकू मल रहे हैं। पीरियड की घंटी कब की बज चुकी है लेकिन वे बैठे हैं मजे में।... थोड़ी देर में तम्बाकू फाँक कर क्लास की तरफ जाएँगे। देखेंगे, बच्चे तो इंतजार करके चले गए हैं।'[2] यहाँ कुछ लोग तो ऐसे भी हैं जो पिताजी के बीमारी का बहाना बनाकर गाँव चले जाते हैं। 25 दिन बाद आकर अटेंडेंस रजिस्टर पर साइन कर देते हैं। बाद में पता चलता है कि वह गाँव जाकर खेतों की बुवाई का काम कर रहे थे। बहुत सारे अध्यापकों के पास विषय ज्ञान न के बराबर है। न उनकी भाषा सही है। वर्तनी में दसियों गलतियाँ होती हैं। नोट्स के बहाने क्लास में किताब खोलकर बाँचते हैं। इस दौर में विद्यार्थियों से अध्यापक का संबंध कृत्रिम बनते जा रहा है।

आज जहाँ अध्यापकों का ऐसा स्तर है वहाँ के विद्यार्थियों के बारे में बात करना बेमानी हो जाता है। इन परिस्थितियों के चलते आज कॉलेज सिर्फ कागजी सर्टिफिकेट बाँटने के कार्यालय बन चुके हैं। बच्चों के पास डिग्री है लेकिन नॉलेज नहीं है। कमोबेश सभी उच्च शिक्षा का यही हाल है। वास्तविक रूप में चिंता इस बात की है कि दिन-ब-दिन यह व्यवस्था खत्म होने की बजाय बढ़ती जा रही है। कहा जाता है जिस देश में युवाओं की संख्या ज्यादा हो उस देश का भविष्य उज्ज्वल होता है। यह सच है लेकिन यह भी सच है कि अकार्यक्षम युवा देश को अँधेरे गर्त में ले जाते हैं। हमारी संस्कृति में यह दर्ज है कि एक अध्यापक या गुरु का अकार्यक्षम होना मतलब एक पीढ़ी का खराब होना। अतः वर्तमान दौर की शिक्षा व्यवस्था एवं उसे संचालित करते गुरुओं के स्तर पर प्रकाश डालें तो पता चलेगा कि हम कितनी पीढ़ियों के साथ ही देश को बर्बादी के रास्ते पर ले जा रहे हैं।

आज हर महाविद्यालय राजनीति का अखाड़ा बन गया है। राजनेताओं को भी लज्जा आए, ऐसी राजनीति शिक्षा संस्थानों में परवान चढ़ रही है। हर कोई अपने स्वार्थ साधने में किसी से कम नहीं है। प्रिंसिपल डॉ राधा कृष्णन कुछ अध्यापकों को आपस में भिड़ा कर, कुछ में फूट डाल कर, कुछ के साथ सख़्ती दिखाकर अपना स्वार्थ साध रहे हैं। वह महाविद्यालय के हर कार्य के माध्यम से अपने स्वार्थ को साधना चाहते हैं फिर चाहे उसके लिए महाविद्यालय कितनी भी खस्ता हालत में क्यों न चला जाए।

हमारे देश की सबसे बड़ी समस्या भ्रष्टाचार है। कोई भी क्षेत्र इससे अछूता नहीं है। शिक्षा के क्षेत्र में भी भ्रष्टाचार अब शिष्टाचार बन गया है। कॉलेज के कैंटीन के कॉन्ट्रेक्ट से लेकर कॉलेज में खरीद की जाने वाले हर चीज में भ्रष्टाचार फैल चुका है। कैंटीन वाला बच्चों से दोगुना पैसे लेता है और चीजें भी सही नहीं देता यह बात प्रिंसिपल को पता है, साथ ही प्रोफेसर पिल्लईभी इस बात को जानती हैं लेकिन प्रोफेसर पिल्लई का हर रोज का पूरा चाय-नाश्ता शेट्टी के तरफ से फ्री में आता है। कभी कभी घर से लंच बॉक्स न आये तो लंच भी कैंटीन से आता है। उन्हें अब इसकी आदत पड़ चुकी है। अतः वह नहीं चाहतीं कि कोई नया कैंटीन मैनेजर आये।

- सर, पिल्लई मैडम ने आप से मिलने को कहा था।' कहते हुए उसने जेब से एक लिफाफा निकाला और उसे मेज पर रखकर राधाकृष्णन की ओर सरका दिया।

राधाकृष्णन ने कुछ देर तक लिफाफे को वहीं पड़े रहने दिया और फिर बोले- हमने पिल्लई मैडम के कहने पर तुम्हारा कॉन्ट्रैक्ट रिन्यू किया है। वैसे तुम्हें पता चल ही गया होगा कि ६-७ लोगों के टेंडर आए थे। पिल्लई मैडम बोलीं कि तुम कई साल से कैंटीन चला रहे हो। सो, तुम्हीं को अगले तीन साल का कांट्रैक्ट भी दे दिया जाय...।'[3] इस तरह का लेन-देन अब शिष्टाचार बनता जा रहा है। जो कैंटीन बच्चों की सहुलियत के लिए महाविद्यालय में होता है, ऐसे कारणों की वजह से ही वह उन्हें चूसने का हथियार बन जाता है। ऐसा नहीं है कि सभी मामलों में प्रशासन एवं प्रिंसिपल भ्रष्टाचार में लिप्त रहते हैं। वैसे जहाँ अर्थ से जुड़े मामले रहते हैं, वहाँ ज्यादातर लोगों का ईमान डाँवाडोल हो जाता है। अब तो भ्रष्टाचार बिन बुलाए मेहमान की तरह बन चुका है। बिन बुलाए मेहमान को जैसे चाहकर भी बाहर का रास्ता दिखा नहीं सकते, वैसे ही शिक्षा क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार शिष्टाचार का चोला पहन चुका है। एक बानगी देखिए। मैडम अस्मिता का अपॉयमेंट दो साल पहले हुआ था। शुरू के छह महीने का वेतन 'एरियर' मिलना बाकी था। इस 'एरियर' को याने अपना पैसा पाने के लिए भी चढ़ावा चढ़ाना पड़ता है। जो चढ़ावा नहीं चढ़ाते उनका 'एरियर' सालों साल लटकता रहता है। पिछले 2 सालों से अस्मिता मैडम का एरियर बाकी था अतः प्रिंसिपल के कहने पर वह और उनके तीन साथी मिलकर 5-5 हजार रुपए ज्वाइंट डायरेक्टर को देने के लिए जमा करते हैं। जिस दिन बीस हजार रुपए प्रिंसिपल सर जी के हाथ में दे दिए जाते हैं, उसके दूसरे ही दिन में अस्मिता मैडम के अकाउंट में भी पैसे जमा हो जाते हैं।

आज शिक्षा के क्षेत्र में नौकरी लगते समय पैसे दो, लगने के बाद पेमेंट निकलवाने के लिए पैसे दो, इंक्रीमेंट मिलने के बाद उसकी कागजों की पूर्ति के लिए पैसे दो। हर जगह पर इस भ्रष्टाचार ने पैर फैला दिए हैं। इस कॉलेज में नियुक्ति के लिए ली जाने वाली रकम को उजागर करते हुए सुजाता महुआ से कहती है 'हमारे डिपार्टमेंट में तीन साल पहले मिसेज नाडार का एप्वाइंटमेंट हुआ था। पता है, उन्होंने कितना दिया।

-कितना दिया?'

- पाँच लाख...।'

- क्या?'

- हाँ, पाँच लाख...। उसके बाद भी इस साल पमार्नेंट हुई हैं।' -सुजाता, मैं तो सोचती थी कि शिक्षा के क्षेत्र में ऐसा नहीं होता होगा।' - तुम अभी नयी हो। धीरे-धीरे और भी बहुत सी बातें मालूम हो जायेंगी तुम्हें।'

-अच्छा सुजाता, एक बात बताओ। यह पैसा जाता कहाँ है।'

- यह पैसा जाता कहाँ है, कितने इसके भागीदार हैं इत्यादि यह अलग शोध का विषय है। उच्च शिक्षा में या शिक्षा क्षेत्र में नियुक्ति कार्य के लिए चलने वाला यह तंत्र कमोबेश देश में सभी जगह कार्यरत है। कहीं-कहीं तो यह रकम पाँच लाख से पचास लाख तक पहुँची है।

इस व्यवस्था के चलते इतना तो तय है कि कुछ लोग इससे मालामाल हो जायेंगें। जिन्हें नौकरी की जरूरत है वह कुछ-न-कुछ जुगाड़ कर ही लेंगें। आखिर में सवाल अपनी जगह बना ही रहता है कि समस्त शिक्षा व्यवस्था का यह तामझाम जिन विद्यार्थियों

के लिए चल रहा है, वह इन नीतियों में कहाँ हैं? उनके बारे में सोच कौन रहा है? जो लोग इतना सारा पैसा देकर अध्यापक बन रहे हैं, क्या वह इस पेशे को सेवा मानेंगें? नहीं, वह तो इसे व्यापार के रूप में ही देखेंगें। अतः आज शिक्षा व्यवस्था में प्रचलित अध्यापक नियुक्ति का यह चलन शिक्षा के स्तर को कहाँ ले जाएगा इस ओर उपन्यासकार इशारा कर हमें सोचने के लिए बाध्य करते हैं।

प्रोफेसर पिल्लई स्टाफरूम की टाइल्स बनवाने के लिए झुनझुनवाला से भाव-ताव करती हैं और काफी चर्चा और बहस के बाद 550 रुपए पर सौदा तय करती हैं।

'देखो, झुनझुनवाला, एक बात कहनी रह गयी। ---अब आप यह कीजिए कि बिल ७५० रुपये

प्रति डिब्बे के हिसाब से बनवाइए।'

झुनझुनवाला मुस्कराने लगे। मिसेज पिल्लई भी मुस्करा दीं। एक रिक्वेस्ट है आपसे। झुनझुनवाला बोले- कुछ परसेंट हमारा भी होना चाहिए।' उनकी आवाज बहुत धीमी थी। मिसेज झुनझुनवाला कुछ सोचने की मुद्रा में आ गयीं। फिर पानी के गिलास को एक तरफ सरका कर बोलीं- आप के लिए यह भी कर देंगे। बिल ८७५ रु. के हिसाब से बनवा कर प्रिंसिपल के नाम से भेज दें।'[5] इसी भ्रष्टाचार की प्रवृत्ति के कारण कॉलेज में बच्चों के लिए जो फंड जमा होता है, वह पैसा बच्चों के बेहतरी के लिए इस्तेमाल न होकर इन लोगों की जेब में पहुँचता है।

जिस तरह से देश को आजाद कराने में बहुतों ने अपने जीवन को खर्च किया है, वैसे ही देश आजाद होने के बाद समाज की उन्नति के लिए कुछ लोगों ने समाजकार्य एवं देशकार्य हेतु शिक्षा की गंगोत्री को देश के विभिन्न क्षेत्रों तक पहुँचाने का सराहनीय कार्य किया। इन लोगों का मकसद आज के शिक्षाविदों की तरह संपत्ति एवं शोहरत कमाना नहीं था। महाराष्ट्र में कर्मवीर भाऊराव पाटील, शिक्षणमहर्षि डॉ बापूजी साळुंखे, पंजाबराव देशमुख आदि का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। पश्चिम महाराष्ट्र में शिक्षणमहर्षि डॉ बापूजी साळुंखे जी ने श्री स्वामी विवेकानंद शिक्षण संस्था की स्थापना कर महाराष्ट्र एवं कर्नाटक के दुर्गम क्षेत्रों में शिक्षा की गंगोत्री को पहुँचाया। शिक्षणमहर्षि डॉ बापूजी साळुंखे शिक्षादान का कार्य जिम्मेदारी वाला एवं पवित्र मानते थे। उनके अनुसार गुरुदेव कार्यकर्ता याने अध्यापक का चरित्र सर्वगुण संपन्न होना चाहिए। शिक्षणमहर्षि डॉ बापूजी साळुंखे का मानना था कि गुरुदेव कार्यकर्ता को हमेशा 'ससंसुं' से दूर रहना चाहिए। 'ससंसुं' याने, स- सत्ता, सं- संपत्ति और सुं- सुंदरी। जो गुरुदेव कार्यकर्ता इस 'ससंसुं' में फँस जाता है, उसका नैतिक पतन होना शुरू हो जाता है।

'कैम्पस कथा' उपन्यास के प्रमुख पात्र प्रिंसिपल डॉ राधा कृष्णन के चरित्र पर प्रकाश डालें तो पता चलता है कि 'ससंसुं' में लिप्त रहते ही उनके चरित्र में गिरावट आनी शुरू होती है। प्रिंसिपल के पद पर कार्यरत होते ही ये कुछ प्राध्यापकों का गुट बनाकर सभी को नियंत्रित करने की जद्दोजहद में लग जाते हैं। ज्वाइन होते ही तीन महीनों में ही उन्होंने 'अपने स्टाफ से अच्छा परिचय प्राप्त कर लिया था। विशेष कर भिन्न-भिन्न विभागों के अध्यक्षों से। उनमें से कुछ पर वे विशेष तवज्जो दे रहे थे। अपनी वकीली नजरों से वे ताड़ लेते थे कि वे कौन-कौन से अध्यापक हैं जो आगे चल कर उनके काम

आ सकते हैं।'[6] अपनी इसी प्रवृत्ति के चलते आप मैडम रेवती, प्रोफेसर पिल्लई मैडम, मिसेज फूलमती, प्रोफेसर करंदीकर, प्रोफेसर रामनाथन और प्रो. गणेशन को अपने गुट में शामिल कर सत्ता का मजा चखते रहे। इसी के चलते मैडम रेवती के द्वारा मिस महुआ के साथ सौतेले व्यवहार को वह नजरअंदाज करते रहे। उन्हें छोटी-छोटी बातों पर मैडम रेवती के कहने पर मेमो देते। इसका नतीजा ये निकला कि मिस महुआ ने यूनिवर्सिटी में कंप्लेन की जिसके चलते कॉलेज के प्रिंसिपल को यूनिवर्सिटी की ग्रिवेंस कमेटी के समक्ष प्रस्तुत होना पड़ा। अपनी इसी सत्ता की खुमारी में प्रिंसिपल राधा कृष्णन संपत्ति के मोह में भी आ जाते हैं। जिसके चलते भ्रष्टाचारी बन जाते हैं। शेट्टी का कॉन्ट्रैक्ट रिनिव करने के लिए उससे रिश्वत लेते हैं जबकि जानते हैं वह कैंटीन में बच्चों से ज्यादा दाम लेता है और खाना भी ढंग का नहीं देता। अस्मिता मैडम और उनके साथियों से बकाया एरियर निकलवाने के लिए ज्वाइंट डायरेक्टर के नाम पर बीस हजार लेते हैं जबकि उनकी करतूत सबको पता है- 'प्रिंसिपल समझते हैं कि वे बड़े होशियार हैं। कायदे-कानून जानते हैं लेकिन वो भी गच्चा खा गए। भला २४ घंटे में डिप्टी डाइरेक्टर को एप्रोच करना, उसका उन्हें एकाउंट नंबर भेजना, फिर बैंक में जमा होना और फिर मेरे पास मैसेज आना। ...'हमारे सिस्टम ने कितनी प्रोग्रेस कर ली है न।' खुल कर हँसते हुए अस्मिता बोली।'[7]

सत्ता के नशे और संपत्ति को बेईमानी से इकट्ठा करने में वह सब कुछ भूल जाते हैं। सुंदरी के मोह से भी वह अपने आप को रोक नहीं पाते। अपने पुराने कॉलेज में अपनी सहायक से संबंध बनाते पत्नी के हाथों पकड़े जाते हैं। पत्नी उनसे रिश्ता तोड़ मायके चली जाती है। उनकी यही आदत उनको आगे भी परेशानी में डालती है। शेट्टी की कैंटीन में काम करने वाले लतिका की बेटी को अपने घर काम के लिए रखते हैं। प्रिंसिपल सर को गलत इरादे से छूते देख वह काम पर आना छोड़ देती है और अपने माँ से शिकायत करती है। जब शेट्टी इस बात को बताने के लिए प्रिंसिपल साहब के पास आते हैं तो वहीं उस पर चिल्ला कर कहते हैं कि किस लड़की को तुमने मेरे पास भेज दिया लेकिन जब पता चलता है कि लड़की की माँ उनके खिलाफ पुलिस में जाने वाली है तब इनका सारा जिस्म बर्फ बनकर जड़ हो जाता है और किसी तरह इस मामले को निपटाने के लिए शेट्टी को पाँच हजार देते हैं। अपने इसी 'ससंसुं' में लिप्त रहने की प्रवृत्ति के चलते ही कॉलेज के मैनेजमेंट की तरफ से आपके ऊपर सत्ता का दुरुपयोग, गुटबाजी को बढ़ावा देना, कॉलेज में सांप्रदायिक भावना केप्रवेश करने पर भी उस पर प्रतिबंध न लगाना, खिलाड़ी स्टूडेंट की सुविधाओं को नजरअंदाज करना, कैंटीन में दी जाने वाली खाने की क्वालिटी बद से बदतर होते हुए भी शेट्टी को ही आगे के तीन साल के लिए कायम रखना आदि कारणों के चलते उन्हें प्रशासन की तरफ से वॉल्येंट्री रिटायरमेंट लेने के लिए कहा जाता है।

पहले के शिक्षाविदों ने शिक्षा के क्षेत्र को इस लिए चुना था कि यह रास्ता समाज एवं देश की उन्नति के राह पर ले जाने वाला है। वह शिक्षा के माध्यम से समाज के हर वर्ग को बिना किसी भेदभाव के उन्नति के रास्ते पर अग्रेसित करना चाहते थे। उनका मानना था कि जब समाज का हर वर्ग शिक्षा ग्रहण कर कार्यक्षम बनेगा तभी देश मजबूत

होगा। इसलिए इन्होंने शिक्षा संस्थानों का निर्माण कर इसे सुचारु रूप से चलाने वाले प्रशासन एवं अध्यापकों आदि के लिए अपने अनुभवों के आधार पर कार्यप्रणाली को विकसित किया। जब तक इन शिक्षाविदों एवं तपस्वियों की कार्यप्रणाली को ध्यान में रख कर शिक्षा संस्थान कार्यरत रहे तब तक शिक्षा का क्षेत्र देश की सेवा की महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा। वर्तमान दौर में शिक्षा का क्षेत्र सेवा न रहकर व्यापार बन गया है। यही कारण है कि वर्तमान शिक्षा व्यवस्था रसातल पर पहुँची है। उपन्यासकार शिक्षा क्षेत्र की इस बदलती कार्यप्रणाली पर प्रकाश डालता है।

ऐसा नहीं है कि उपन्यासकार ने शिक्षा क्षेत्र में व्याप्त काले पक्ष को ही हमारे सामने रखा है। लेखक ने रामेश्वरम कॉलेज के दोनों पक्षों को ईमानदारी से रखा है। यहाँ मिस महुआ, डॉ शंकरन जैसे लोग हैं जो शिक्षा के क्षेत्र को जिम्मेदारी वाला मानते हैं। अपना काम पूरी ईमानदारी से करने के पक्ष में हैं। उनके इस काम में उनको सताया भी जाता है लेकिन वह अपने मकसद से हटते नहीं, डटे रहते हैं। हर मुश्किल का सामना करते हैं अंत में जीत भी जाते हैं। वास्तविक रूप से कहें तो शिक्षा-क्षेत्र में ऐसे लोग होने के कारण ही इस क्षेत्र की गरिमा अभी बनी हुई है।

इस तरह कह सकते है कि देवेश ठाकुर जी ने 'कैम्पस कथा' के माध्यम से वर्तमान उच्च शिक्षा व्यवस्था की सभी परतें खोलने का उल्लेखनीय कार्य किया है। उपन्यासकार ने उच्च शिक्षा में व्याप्त भ्रष्टाचार, अध्यापकों की मानसिकता आदि की प्रामाणिक तस्वीर प्रस्तुत की है। भले ही इस उपन्यास का केंद्र मुंबई स्थित रामेश्वरम कॉलेज है लेकिन इसका कलेवर इतना विस्तृत है कि अगर इस देश के किसी भी कोने के किसी भी कॉलेज का नाम लें तो उसकी भी यही तस्वीर उभर कर सामने आएगी, जो उपन्यासकार ने प्रस्तुत की है।

संदर्भः

1. ठाकुर देवेश- कैम्पस कथा, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2022, पृष्ठ क्र.11-12
2. वही पृष्ठ क्र. 24
3. वही पृष्ठ क्र. 43
4. वही पृष्ठ क्र. 53
5. वही पृष्ठ क्र. 133
6. वही पृष्ठ क्र. 27
7. वही पृष्ठ क्र. 164

हिंदी विभाग प्रमुख एवं सहायक प्राध्यापक
विवेकानंद कॉलेज, कोल्हापुर (स्वायत्त)